# स्कूल की भूल

## झारखंड में स्कूली शिक्षा का संकट

ज्ञान विज्ञान समिति झारखंड

दिसंबर 2022

यह रिपोर्ट ज्ञान विज्ञान समिति झारखंड (जीवीएसजे) द्वारा सितंबर-अक्तूबर 2022 में झारखंड के 138 प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों के सर्वेक्षण के मुख्य निष्कर्षों को प्रस्तुत करती है. झारखंड में शुरू से ही कमजोर स्कूली शिक्षा प्रणाली को कोविड-19 संकट के दौरान भारी झटका लगा. इससे उभरने के लिए हाल में शुरू किए गए उपाय पूरी तरह अपर्याप्त हैं. झारखंडी बच्चों के कल्याण और अधिकारों की रक्षा के लिए स्कूली शिक्षा प्रणाली में बड़े पैमाने पर निवेश की जरूरत है. ज्यादातर स्कूलों ने अभी तक शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 का पालन नहीं किया है।

यह रिपोर्ट ज्ञान विज्ञान समिति झारखंड, भारत ज्ञान विज्ञान समिति (बीजीवीएस) के झारखंड चैप्टर की ओर से परन अमितावा और ज्यां द्रेज ने तैयार की है. यह सर्वेक्षण जीवीएसजे के वॉलंटियर्स ने किया था. मुस्कान सोनी और मोहम्मद वकास को डिज़ाईन और अनुवाद के लिए, और परन के काम का समर्थन करने और रिपोर्ट जारी करने की सुविधा के लिए नेशनल कॉलिएशन ऑन द एजुकेशन एमर्जेंसी को दिल से धन्यवाद।

# सर्वेक्षण की झलकियां

झारखंड में स्कूली शिक्षा प्रणाली शिक्षकों की कमी से जूझ रही है. नमूने या सैंपल में केवल 53 फीसद प्राइमरी स्कूलों और 19 फीसद अपर-प्राइमरी स्कूलों में शिक्षा का अधिकार अधिनियम के तहत निर्धारित छात्र-शिक्षक अनुपात 30 से कम था.

सैंपल के 138 स्कूलों में से 20 फीसद में एक ही शिक्षक था. इनमें से ज्यादातर स्कूलों में एकमात्र शिक्षक पुरुष पारा शिक्षक है. इकलौते शिक्षक वाले स्कूलों में लगभग 90 फीसद विद्यार्थी दलित या आदिवासी बच्चे हैं.

प्राइमरी स्तर पर ज्यादातर शिक्षक (55 फीसद) पारा शिक्षक और अपर-प्राइमरी स्तर पर 37 फीसद पारा शिक्षक हैं. सैंपल में लगभग 40 फीसद प्राइमरी स्कूल पूरी तरह से पारा शिक्षक ही चला रहे हैं.

ज्यादातर स्कूलों के शिक्षकों का मानना है कि फरवरी 2022 में स्कूलों के फिर से खुलने तक ‘‘अधिकांश’’ छात्र पढ़ना-लिखना भूल गए थे.

सर्वेक्षण के दिन विद्यार्थियों की उपस्थिति (नामांकित बच्चों के मुकाबले उपस्थित बच्चे) प्राइमरी स्कूलों में केवल 68 फीसद और अपर-प्राइमरी स्कूलों में 58 फीसद थी.

सैंपल में शामिल एक भी स्कूल में कार्यात्मक शौचालय, बिजली और पानी की सुविधा नहीं थी.

सैंपल के दो-तिहाई प्राइमरी स्कूलों में चारदीवारी नहीं थी, 64 फीसद में खेल का मैदान नहीं था और 37 फीसद में लाइब्रेरी की किताबें नहीं थीं.

बातचीत करने वाले ज्यादातर शिक्षकों (दो-तिहाई) ने कहा कि सर्वेक्षण के समय स्कूल के पास मिडडे मील के लिए पर्याप्त पैसा नहीं है.

कई स्कूल (10 फीसद शिक्षक और ज्यादातर, सर्वेक्षण टीमों के मुताबिक) अब भी हफ्ते में दो बार अंडे नहीं दे रहे हैं, जो तय किया गया था.

ज्यादातर सैंपल स्कूलों में, ‘‘फाउंडेशनल लिटरेसी ऐंड न्यूमरेसी’’ (एफएलएन) सामग्री बांटने को छोड़कर, उन बच्चों की मदद के लिए खास कुछ नहीं किया गया जो कोविड-19 संकट के दौरान पढ़ना-लिखना भूल गए थे.

(स्रोत: झारखंड के 16 जिलों के 138 प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों का जीवीएसजे सर्वेक्षण, सितंबर-अक्तूबर 2022. इन सैंपल स्कूलों को 26 सैंपल ब्लॉकों के भीतर बेतरतीब ढंग से चुना गया था. इन स्कूलों में कम से कम 50 फीसद विद्यार्थी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के हैं.)

# झारखंड में स्कूली शिक्षा का संकट

देश में सबसे कमजोर शिक्षा व्यवस्था में से एक झारखंड में है. यहां के ज्यादातर स्कूलों ने अभी तक शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के तहत निर्धारित न्यूनतम मानदंडों का पालन नहीं किया है. खासकर कई स्कूलों में शिक्षकों और बुनियादी सुविधाओं की गंभीर कमी है. इनमें खासकर वे स्कूल हैं जिनमें दलित और आदिवासी बच्चे पढ़ने जाते हैं. इस स्कूली शिक्षा व्यवस्था की कार्य संस्कृति में काफी सुधार की जरूरत है. एनुअल सर्वे ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट (एएसईआर) के मुताबिक, झारखंड उन चंद राज्यों (जिनमें बिहार, असम और उत्तर प्रदेश भी शामिल हैं) में शुमार है जहां 2011 में 8-11 आयु वर्ग के आधे बच्चे एक मामूली पैराग्राफ पढ़ने में असमर्थ थे.

इस कमजोर स्कूली शिक्षा व्यवस्था को 2020-21 में कोविड-19 संकट ने बुरी तरह प्रभावित किया. प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूल दो साल के लिए बंद कर दिए गए थे—इतने लंबे समय तक दुनिया में कहीं और स्कूल बंद नहीं किया गया. पहले से ही अल्पविकसित परिसर रखरखाव के अभाव में खराब हो गए. महामारी के दौरान विशेषाधिकार प्राप्त बच्चों का एक छोटा तबका ऑनलाइन पढ़ाई जारी रखे हुआ था लेकिन बाकी बच्चों को उनके हाल पर छोड़ दिया गया. काफी बच्चे वह सब भूल गए जो उन्होंने पहले सीखा था (बाखला एवं अन्य, 2021). 2022 की शुरुआत में स्कूल फिर से खुले और इसके तुरंत बाद जिन बच्चों ने कोविड-19 संकट से पहले दाखिला लिया था, उन्हें तीन साल आगे के क्लास में भेज दिया गया. इन बच्चों को आगे के क्लास की पढ़ाई के लिए तैयार करने के लिए कोई गंभीर कदम नहीं लिए गए. इस तरह एक बार फिर गरीब बच्चों को उनके हाल पर छोड़ दिया गया.

ज्ञान विज्ञान समिति झारखंड (जीवीएसजे) ने इस स्थिति का आकलन करने के लिए सितंबर-अक्तूबर 2022 में झारखंड में प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों का एक सर्वेक्षण किया. यह रिपोर्ट उसी सर्वेक्षण के मुख्य निष्कर्षों को पेश करती है.

# सर्वेक्षण

यह जीवीएसजे सर्वेक्षण उन सरकारी प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों पर केंद्रित है जहां कम से कम 50 फीसद नामांकित बच्चे अनुसूचित जाति (एससी) या अनुसूचित जनजाति (एसटी) परिवारों से हैं. यह सर्वे 16 जिलों में फैले 26 ब्लॉकों में किया गया—ऐसे ब्लॉक जहां जीवीएसजे के वॉलंटियर्स सर्वेक्षण करने के लिए उपलब्ध थे.[1] हमने हर ब्लॉक में आठ स्कूलों (प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों की समान संख्या के साथ) की सूची बनाई. कम से कम 50 फीसद अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के बच्चों के दाखिले वाले इन स्कूलों को बेतरतीब ढंग से चुना गया. जीवीएसजे के वॉलंटियर्स ने उसी सूची से क्रमानुसार स्कूलों का सर्वेक्षण उनके समय की उपलब्धता के अनुसार किया. प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों के बीच लगभग समान रूप से विभाजित कुल 138 स्कूलों का सर्वेक्षण किया गया (देखें: तालिका 1).[2] यह सैंपल झारखंड के सभी सरकारी स्कूलों की स्थिति नहीं दर्शाता, लेकिन यह सर्वेक्षण जिलों – या झारखंड – में वंचित समुदायों के लिए सुलभ सरकारी स्कूलों की दशा का आइना हो सकता है, क्योंकि राज्य भर में सरकारी स्कूल काफी हद तक एक जैसे हैं. सैंपल स्कूलों और यूनिफाइड डिस्ट्रिक्ट इन्फॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन (यूडीआइएसई) के पूरे झारखंड के डेटा के बीच बुनियादी तुलना में जीवीएसजे सैंपल में गंभीर पूर्वाग्रह का कोई सबूत सामने नहीं आया.

सर्वे टीम स्कूल चालू होने के समय पहले से खबर किए बगैर सैंपल स्कूलों में पहुंची. उन्होंने सबसे वरिष्ठ शिक्षक (जिन्हें आगे हम "उत्तरदाता शिक्षक" लिखेंगे) के साथ लंबी बातचीत की. इस बातचीत में स्कूल के बुनियादी ढांचे की स्थिति, शिक्षण विधियों, मिडडे मील, बेहतर शिक्षा की गुणवत्ता में बाधाएं, कोविड-19 संकट से प्रभावित बच्चों की मदद के लिए शुरू किए गए उपाय और विभिन्न मामलों पर शिक्षकों के विचार जैसे विषय शामिल थे. प्रश्नावली हालांकि मोटे तौर पर मात्रात्मक थी लेकिन इसमें कई गुणात्मक सवाल भी थे. इसमें एक ऐसा हिस्सा भी था जिसमें जांच करने वाले स्कूल के बारे में अपनी राय दर्ज कर सकते थे. सर्वे टीमों ने स्कूल में विद्यार्थियों के दाखिले और उनकी मौजूदगी के आंकड़ों सहित कुछ दूसरे रिकॉर्ड की भी जांच की.

(1) इस सर्वेक्षण के 16 जिले थे: बोकारो, चतरा, देवघर, धनबाद, दुमका, गढ़वा, गोड्डा, गिरिडीह, खूंटी, कोडरमा, लातेहार, लोहरदग्गा, पलामू, रामगढ़, सरायकेला और पश्चिम सिंहभूम.

(2) प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूल क्रमशः कक्षा 1-5 और कक्षा 1-8 को कवर करते हैं. हमारे सैंपल में प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों का अनुपात लगभग 1:1 है, लेकिन झारखंड के सभी सरकारी स्कूलों के लिए 2:1 जैसा है. हमने ज्यादातर तालिकाओं में प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों के लिए अलग-अलग आंकड़े प्रस्तुत किए हैं.

## तालिका 1: सैंपल स्कूल

| | प्राइमरी स्कूल | अपर-प्राइमरी स्कूल |
|---|---|---|
| **सैंपल स्कूलों की संख्या** | 72 | 66 |
| **नामांकित बच्चों की औसत संख्या** | 54 | 210 |
| **कक्षाओं की औसत संख्या** | 2 | 5 |
| **शिक्षकों की औसत संख्या** | 1.9 | 4.7 |
| **औसत छात्र/शिक्षक अनुपात** | 33 | 48 |

नोट: प्राइमरी स्कूल = कक्षा *1-5*. अपर-प्राइमरी स्कूल = कक्षा *1-8*.

# दोषपूर्ण स्कूली शिक्षा प्रणाली

इस सर्वेक्षण ने झारखंड की स्कूली शिक्षा प्रणाली में दो तरह की समस्याओं को उजागर किया: कोविड-19 संकट से पहले की कमियां और हाल में इस संकट से पैदा हुई समस्याएं. इस सेक्शन में पहले कि कमियों पर ध्यान दिया गया है, जो शिक्षकों, कक्षाओं और सुविधाओं की भारी कमी से शुरू होती है.

# शिक्षकों की कमी

ग्रामीण झारखंड में बसावट का पैटर्न स्कूली शिक्षा प्रणाली के लिए खास चुनौती पेश करता है: राज्य के लोग अक्सर बड़े इलाकों में फैली हुई कई छोटी बस्तियों में आबाद हैं. चूंकि प्राइमरी स्कूल बच्चों के घरों के करीब स्थित होते हैं (यह शिक्षा के अधिकार अधिनियम के तहत कानूनी दायित्व भी है), लिहाजा झारखंड में बड़ी संख्या में छोटे स्कूल हैं. ग्रामीण झारखंड के सामान्य प्राइमरी स्कूल में केवल दो क्लासरूम और एक या दो शिक्षक हैं. भले ही विद्यार्थियों की संख्या ज्यादा नहीं हो, जैसा कि अक्सर होता है, तो भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना स्वाभाविक रूप से मुश्किल होता है, क्योंकि एक या दो शिक्षकों को ही प्रशासनिक कार्यों के साथ पांच अलग-अलग क्लास के बच्चों को पढ़ाना भी होता है.

लेकिन शिक्षकों की कमी के पीछे बसावट का पैटर्न ही एकमात्र वजह नहीं है. यह इस तथ्य से देखा जा सकता है कि अपेक्षाकृत बड़े अपर-प्राइमरी स्कूलों में भी शिक्षकों की भारी किल्लत है. हकीकत तो यह है कि हमारे सैंपल में प्राइमरी स्कूलों के मुकाबले अपर-प्राइमरी स्कूलों में छात्र-शिक्षक अनुपात (पीटीआर) ज्यादा है.

तालिका 2-4 छात्रों की संख्या, शिक्षकों की संख्या और छात्र-शिक्षक अनुपात के आधार पर स्कूलों का वितरण पेश करती है. शिक्षा का अधिकार अधिनियम के तहत प्राइमरी या अपर-प्राइमरी स्तर पर किसी भी स्कूल में पीटीआर 30 से ज्यादा नहीं होना चाहिए.[3] हमारे सैंपल में आधे प्राइमरी स्कूल और 80 फीसद अपर-प्राइमरी स्कूल इस बुनियादी मानदंड का उल्लंघन करते हैं. लगभग 40 फीसद अपर-प्राइमरी स्कूलों (और 20 फीसद प्राइमरी स्कूलों) में पीटीआर 50 से ऊपर है, जिससे प्रभावी शिक्षण वस्तुतः नामुमकिन हो जाता है. इस शोध के नतीजे पहले के शोध के अनुरूप है. इसमें यह संकेत है कि सभी प्रमुख भारतीय राज्यों के मुकाबले झारखंड में शिक्षकों की सबसे ज्यादा किल्लत है.[4]

---

(3) कक्षा 6-8 के लिए वास्तव में अधिकतम 35 है, लेकिन उन कक्षाओं के लिए विषय-विशिष्ट शिक्षकों के लिए भी मानदंड हैं (जैसे गणित, भाषा और सामाजिक अध्ययन के लिए), हमारे सर्वेक्षण वाले ज्यादातर अपर-प्राइमरी स्कूलों में घोर उल्लंघन किया गया. 200 से अधिक विद्यार्थियों वाले प्राइमरी स्कूलों के लिए अधिकतम पीटीआर 40 है.

(4) दत्ता और किंगडन (2021). लेखक पाते हैं कि असली पीटीआर "झारखंड को छोड़कर सभी राज्यों में 30 से बहुत कम है" (पृ. 6). लेखकों ने वास्तविक पीटीआर की गणना नकली दाखिले को हटा कर की है.

## तालिका 2: शिक्षकों की संख्या के आधार पर स्कूलों का प्रतिशत वितरण

| शिक्षकों की संख्या | प्राइमरी स्कूल (%) | अपर-प्राइमरी स्कूल (%) | सभी सैंपल स्कूल (% |
|---|---|---|---|
| 1 | 35 | 4 | 20 |
| 2 | 53 | 14 | 34 |
| 3 – 5 | 12 | 50 | 30 |
| 5 से ज्यादा | 0 | 32 | 16 |

कुल कॉलम=*100*

## तालिका 3: छात्रों की संख्या के आधार पर स्कूलों का प्रतिशत वितरण

| छात्रों की संख्या | प्राइमरी स्कूल (%) | अपर-प्राइमरी स्कूल (%) | सभी सैंपल स्कूल (%) |
|---|---|---|---|
| 30 से कम | 16 | 3 | 10 |
| 30 – 50 | 36 | 5 | 18 |
| 50 – 100 | 46 | 15 | 31 |
| 100 – 200 | 2 | 35 | 19 |
| 200 से ज्यादा | 0 | 42 | 22 |

कुल कॉलम=*100*

## तालिका 4: छात्र-शिक्षक अनुपात के आधार पर विद्यालयों का प्रतिशत वितरण

| छात्र–शिक्षक अनुपात | प्राइमरी स्कूल (%) | अपर–प्राइमरी स्कूल (%) | सभी सैंपल स्कूल (%) |
|---|---|---|---|
| 30 से कम | 53 | 19 | 36 |
| 30 – 40 | 21 | 21 | 21 |
| 40 – 50 | 8 | 23 | 15 |
| 50 से ज्यादा | 18 | 37 | 28 |

कुल कॉलम=*100*

उत्तरदाता शिक्षकों ने शिक्षकों की कमी के बारे में बार-बार और जोरदार ढंग से शिकायत की. कई स्कूलों में एक शिक्षक ज्यादातर वक्त रिकॉर्ड रखने और अन्य गैर-शिक्षण कामों में व्यस्त रहता है (मिसाल के तौर पर, सर्वेक्षण के वक्त शिक्षकों का अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए जाति प्रमाण पत्र से जुड़े काम में बहुत वक्त लग रहा था). इसकी वजह से शैक्षिक गतिविधियों के लिए बहुत कम शिक्षक उपलब्ध होते हैं. प्राइमरी स्कूलों में इकलौते "सक्रिय शिक्षक" के लिए सभी बच्चों को एक क्लासरूम में ले जाकर या बारी-बारी से दो क्लासरूम में जाकर उनका ख्याल रखना सामान्य बात है. ऐसे हालात में वह असली शिक्षक के मुकाबले बच्चों की देखभाल करने वाला ज्यादा होता/होती है.

शिक्षा का अधिकार अधिनियम के मुताबिक, सभी स्कूलों में कम से कम दो शिक्षक होने चाहिए, फिर भी हमारे सैम्पल के 35 फीसद प्राथमिक स्कूलों में (20 फीसद सैंपल स्कूलों में) एक ही शिक्षक था. ज्यादातर इकलौते शिक्षक वाले स्कूलों को पारा शिक्षक ही चलाते हैं और हमें उनमें से एक को छोड़कर सभी पुरुष मिले हैं. इन स्कूलों में औसतन 51 बच्चे नामांकित हैं. इन स्कूलों में ज्यादातर विद्यार्थी (87 फीसद) दलित या आदिवासी हैं. **इकलौते शिक्षक वाले स्कूलों की हालत दयनीय है** —देखें: बॉक्स 1.

# बॉक्स 1
# एकल शिक्षक वाले स्कूलों की दशा

| गांव और जिला | सर्वे टीम की राय |
|---|---|
| कोदय डीह (गिरिडीह) | इस स्कूल में 78 छात्र हैं लेकिन शिक्षक केवल एक है. वह छात्रों को दो कमरों में बिठाते हैं और दोनों में जाते-आते हैं. जब वह गैर-शैक्षणिक कार्यों में व्यस्त होते हैं, तो छात्र उनके इंतजार में खाली बैठे रहते हैं. |
| सिरसिया (गिरिडीह) | 110 विद्यार्थियों वाला मिडिल स्कूल होने के बावजूद यहां एक ही शिक्षक है. शिक्षक छात्रों को ठीक से समय नहीं दे पा रहे हैं. |
| नौका (गढ़वा) | इस स्कूल में 24 विद्यार्थियों ने दाखिला लिया था लेकिन केवल 18 उपस्थित थे. इसका परिसर साफ नहीं हैं. खेल-कूद का कोई मैदान नहीं है. छात्रों को अंडे नहीं मिलते. उन्हें न तो यूनिफॉर्म दिया गया है और न ही उनके बैंक खातों में छात्रवृत्ति का पैसा भेजा गया है. सब कुछ शिक्षक की मर्जी से हो रहा है, कोई नियम नहीं है. |
| कुसुम्बा (दुमका) | स्कूल में एक ही शिक्षक होना ठीक नहीं है. विभिन्न कक्षाओं के सभी छात्रों को एक साथ बैठने के लिए कहा जाता है और यह उन्हें पढ़ाने का अच्छा तरीका कतई नहीं है. |
| धनबाशा (दुमका) | यह स्कूल जंगल के बहुत अंदर है. यहां पहुंचने के लिए सड़क नहीं है. ग्रामीणों ने आने-जाने के लिए जंगल में पगडंडी बना लिया है. इस स्कूल की स्थिति अच्छी नहीं है. कोई दरी नहीं होने की वजह से विद्यार्थी जमीन पर ही बैठते हैं. उनके पास दो शिक्षक होने चाहिए लेकिन एक पारा शिक्षक ही यहां प्रशासक के रूप में काम करते हैं. |
| कुसुमटोला (पलामू) | इस स्कूल में कक्षाओं की कमी है. सभी विद्यार्थी एक साथ एक ही कमरे में बैठते हैं. उनमें से कई गरीब परिवारों के आदिवासी छात्र हैं. इकलौते शिक्षक को कई तरह की दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है. इस स्कूल में पढ़ाई-लिखाई का माहौल तैयार करने के लिए एक नए शिक्षक की नियुक्ति की जानी चाहिए, और खेल-कूद के मैदान के लिए जगह बनाई जानी चाहिए. |
| हरिलाकोल (धनबाद) | इस स्कूल में एक ही शिक्षक हैं. अगर वह छुट्टी लेते हैं तो स्कूल बंद करना पड़ता है. |
| अरकी (खूंटी) | इस स्कूल के विद्यार्थियों में अनुशासन की कमी है और इसमें केवल एक ही शिक्षक होने की वजह से विद्यार्थियों के उद्दंड होने का माहौल बनता है. |
| केंदू (चतरा) | इस स्कूल में एक ही शिक्षक हैं, और वह भी पारा शिक्षक हैं. इस शिक्षक के पास पढ़ाने के अलावा कई जिम्मेदारियां हैं और उन्हें बीआरसी बार-बार बुलाता रहता है. |
| पंचा (रामगढ़) | इकलौते शिक्षक वाला यह स्कूल बड़ा मुद्दा है. उन्हें लगातार गैर-शैक्षणिक काम में लगा दिया जाता है. |

नोट: यह एकल-शिक्षक स्कूलों की आंशिक सूची है. अन्य एकल-शिक्षक विद्यालयों में भी इसी तरह के हालात की सूचना मिली थी.

झारखंड में स्कूली शिक्षा प्रणाली की एक और खासियत कि वजह से शिक्षकों की कमी है: पारा शिक्षकों का उच्च अनुपात (स्थायी शिक्षकों के मुकाबले). प्राइमरी स्तर पर आधे से ज्यादा (55 फीसद) और अपर-प्राइमरी स्तर पर 37 फीसद (तालिका 5) पारा-शिक्षक नियुक्त हैं.[5] इसके अलावा, हमारे सैंपल के 40 फीसद प्राइमरी स्कूलों में स्थायी शिक्षक नहीं थे—उन्हें पूरी तरह से पारा-शिक्षक ही चला रहे थे. इस मामले में भी देश के दूसरे राज्यों और झारखंड के बीच बहुत बड़ी खाई है.[6] नियमित शिक्षकों के मुकाबले पारा-शिक्षकों की योग्यता और प्रशिक्षण कम होती है और उनकी जवाबदेही संदिग्ध होती है. इसके अलावा, यह अलग टीचिंग काडर, जिसमें पारा-शिक्षकों की सैलरी बहुत कम और वेतन नियमित नहीं है। जिसकी वजह से शिक्षकों में आपसी सहयोग नहीं बन पता है।

झारखंड में टीचिंग काडर की एक और कमी है, महिला शिक्षकों का कम अनुपात: जीवीएसजे सैंपल (तालिका 5) के प्राइमरी स्कूलों में सभी शिक्षकों का बमुश्किल पांचवां हिस्सा और अपर-प्राइमरी स्कूलों में एक-तिहाई हिस्सा महिला शिक्षकों का है.[7] शायद महिला शिक्षक अपर-प्राइमरी स्कूल पसंद करती हैं क्योंकि वे वहां सुरक्षित महसूस करती हैं, और प्रशासन उनकी इस पसंद का कुछ हद तक ख्याल रखता है. बहरहाल, वजह चाहे जो हो, हमने पाया कि प्राइमरी स्कूलों में महिला शिक्षकों की बेहद कमी है, और अपर-प्राइमरी स्कूलों में भी उनकी उपस्थिति कुछ खास नहीं है.

एक सकारात्मक पहलू यह है कि झारखंड में टीचिंग काडर की सामाजिक संरचना कई दूसरे राज्यों के मुकाबले शायद अधिक विविध है. चाहे हम स्थायी शिक्षकों की संख्या देखें या पारा-शिक्षकों की, काफी हद तक यह समग्र रूप से जनसंख्या की संरचना को प्रतिबिंबित करता है (देखें: तालिका 6).[8] निश्चित रूप से निजी स्कूलों की तुलना में यह सरकारी स्कूलों की सकारात्मक विशेषता है: यूडीआइएसई के आंकड़ों के मुताबिक, झारखंड में मान्यता प्राप्त, गैर-सहायता प्राप्त निजी स्कूलों में ज्यादातर (60 फीसद) शिक्षक "सामान्य" श्रेणी के हैं, और अनुसूचित जाति के शिक्षक सिर्फ 2 फीसद हैं. चूंकि सरकारी स्कूलों में छात्र वंचित समुदायों से आते हैं, लिहाजा टीचिंग काडर में इन समुदायों के बेहतर प्रतिनिधित्व के लिए तर्क दिया जा सकता है.[9] मिसाल के तौर पर, आदिवासी क्षेत्रों में ज्यादातर शिक्षक स्थानीय आदिवासी होते हैं, जो जाहिर है, स्थानीय भाषा और संस्कृति से परिचित होते हैं.

---

(5) यूडीआइएसई डेटा पूरे झारखंड में पारा-शिक्षकों के उच्च अनुपात का संकेत देता है: प्राइमरी स्कूलों में सभी शिक्षकों का 77 फीसद और अपर-प्राइमरी स्कूलों में 54 फीसद (शिक्षा विभाग की ओर से संचालित स्कूलो में).
(6) देखें दत्ता और किंगडन (2021), तालिका 7. झारखंड एकमात्र बड़ा राज्य है जहां ज्यादातर शिक्षक पारा शिक्षक हैं.
(7) यूडीआइएसई के आंकड़ों के मुताबिक, पूरे झारखंड में शिक्षा विभाग की ओर से संचालित प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों में महिला शिक्षकों का अनुपात लगभग 27 फीसद है.
(8) झारखंड के लिए यूडीआइएसई डेटा से इस बिंदु की पुष्टि होती है.
(9) यूडीआइएसई के आंकड़ों के अनुसार, झारखंड में प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्तर पर केवल 12 फीसद छात्र "सामान्य" श्रेणी के हैं.

## तालिका 5: लिंग और नियुक्ति प्रकार के आधार पर शिक्षकों का वितरण

| | प्राइमरी स्कूल के शिक्षक (%) | | | अपर-प्राइमरी स्कूल के शिक्षक (%) | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | पुरुष | महिला | कुल | पुरुष | महिला | कुल |
| स्थायी | 37 | 8 | 45 | 40 | 23 | 63 |
| पारा | 42 | 13 | 55 | 25 | 13 | 37 |
| कुल | 79 | 21 | 100 | 65 | 35 | 100 |

## तालिका 6: सैंपल शिक्षकों की सामाजिक संरचना और झारखंड की जनसंख्या (%)

| | शिक्षक (प्राइमरी और अपर प्राइमरी स्कूल) | | | झारखंड की जनसंख्या |
|---|---|---|---|---|
| | स्थायी शिक्षक | पारा शिक्षक | सभी शिक्षक | |
| अनुसूचित जाति | 11 | 13 | 12 | 12 |
| अनुसूचित जनजाति | 23 | 29 | 25 | 26 |
| अन्य पिछड़ा वर्ग | 38 | 38 | 38 | 40 [a] |
| सामान्य | 28 | 20 | 25 | 22 [b] |

(a) a दूसरे इंडियन ह्यूमन डेवलपमेंट सर्वे (आइएचडीएस-2) पर आधारित. एससी और एसटी के लिए आइएचडीएस-2 के आंकड़े क्रमशः 13% और 23% हैं.
(b) 100% से सब-टोटल घटाकर अनुमानित.

# ढांचागत कमियां

1996 में पब्लिक रिपोर्ट ऑन बेसिक एजुकेशन (प्रोब) सर्वेक्षण में पाया गया कि अविभाजित बिहार सहित चार बड़े उत्तर भारतीय राज्यों में 42 फीसद सरकारी प्राइमरी स्कूलों में दो पक्की कक्षाएं भी नहीं थीं. दस साल बाद यह आंकड़ा कम होकर भी 27 फीसद के बराबर था.[10] उसके बाद से स्कूल के बुनियादी ढांचे में बहुत सुधार हुआ है: आज झारखंड के ज्यादातर स्कूलों की इमारत पक्की है, जिसमें कम से कम दो क्लासरूम, एक कार्यालय, शौचालय और खाना पकाने का शेड है. लेकिन करीब से देखने पर पता चलता है कि स्कूल परिसर की स्थिति बहुत खराब है और स्कूल में मिलने वाली सुविधाओं में अब भी साफ कमी दिखती है. मिसाल के तौर पर, जीवीएसजे सैंपल में एक भी स्कूल में इस्तेमाल करने लायक शौचालय नहीं था, बिजली और पानी की आपूर्ति भी नहीं थी, जबकि ये सुविधाएं अब तक हर स्कूल में उपलब्ध होनी चाहिए.

सैंपल स्कूलों में सर्वेक्षण टीमों ने जो बुनियादी सुविधाओं की स्थिति देखी, उसका सार तालिका 7 में पेश किया गया है. आदर्श स्थिति तो यह होती कि ज्यादातर स्कूलों में ये सभी सुविधाएं "अच्छी" स्थिति में हों, लेकिन हकीकत में सभी स्कूलों में कई खामियां पाई गईं. यहां कुछ ज्यादा गंभीर खामियों का ही जिक्र किया जा रहा है.

**छतें:** लगभग आधे सैंपल स्कूलों में सर्वे के वक्त छत की हालत अच्छी नहीं थी. कुछ छतों में दरार थी या उनके गिरने का भी खतरा था. बारिश के दौरन अक्सर उनसे पानी टपकने लगता है, जिसकी वजह से क्लासरूम में बैठना दूभर हो जाता है और पढ़ने-पढ़ाने के लिए जगह माकूल नहीं रह जाती.

> **"दो क्लासरूम में से एक में छत से पानी टपकता है. केजी से क्लास 5 तक के सभी छात्र एक ही क्लास में बैठते हैं." (बैरिया, पलामू जिला)**

**बाउंड्री वॉल:** बाउंड्री वॉल या चारदीवारी बच्चों की सुरक्षा के साथ ही स्कूल की साफ-सफाई के लिए जरूरी है. बिना बाउंड्री वॉल वाले स्कूलों में आवारा पशुओं या शराबियों का आना आम बात है. इसके बावजूद ताज्जुब की बात है कि 64 फीसद प्राइमरी स्कूलों और 39 फीसद अपर-प्राइमरी स्कूलों में कोई बाउंड्री वॉल नहीं है.

> **"बाउंड्री वॉल नहीं होने की वजह से जानवर स्कूल परिसर में घुसते रहते हैं. कभी-कभी तो जंगली हाथी भी आ जाते हैं. इससे स्कूल के वक्त छात्रों को कुछ खतरा रहता है." (बोगई, रामगढ़ जिला)**

---

(10) देखें प्रोब टीम (1999), पृ. 40-41, और डे और अन्य (2011), पृ. 2.

# तालिका 7: सर्वे टीम का सैंपल स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं की स्थिति का आकलन

| | प्राइमरी स्कूल (%) | | | अपर प्राइमरी स्कूल (%) | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | अच्छा | उदासीन[a] | अनुपस्थित[b] | अच्छा | उदासीन[a] | अनुपस्थित[b] |
| जल आपूर्ति | 49 | 36 | 15 | 41 | 44 | 15 |
| शौचालय | 41 | 44 | 15 | 43 | 52 | 5 |
| घड़ी | 50 | 25 | 25 | 68 | 26 | 6 |
| बिजली की फिटिंग | 46 | 38 | 16 | 68 | 27 | 5 |
| छत | 69 | 29 | 2 | 53 | 40 | 7 |
| दरवाजे | 76 | 21 | 3 | 72 | 25 | 3 |
| चार दीवारी | 9 | 27 | 64 | 30 | 31 | 39 |
| खाना पकाने का शेड | 48 | 31 | 21 | 50 | 35 | 15 |
| खेल का मैदान | 3 | 33 | 64 | 11 | 44 | 45 |
| लाइब्रेरी | 44 | 19 | 37 | 44 | 33 | 23 |

(a) a “ठीक ठाक” या “खराब”.
(b) बेकार, या बिल्कुल उपलब्ध नहीं है.

**खेल के मैदान:** कुछ हद तक चारदीवारी की कमी की वजह से ज्यादातर सैंपल स्कूलों में खेल का मैदान नहीं था. बच्चे स्कूल में खेल के मैदान के बिना भला कैसे खुशनुमा वक्त बिता सकते हैं?

> **“इस स्कूल में कोई खेल का मैदान या चारदीवारी नहीं है. बच्चों के पास खेलने के लिए जगह नहीं है और आवारा जानवर स्कूल परिसर में घुसते रहते हैं.” (सरहडीह, गढ़वा जिला)**

**पानी की आपूर्ति:** सैंपल स्कूलों में से केवल आधे में पानी की आपूर्ति संतोषजनक थी, और 15 फीसद स्कूलों में बिल्कुल भी पानी की आपूर्ति नहीं थी. पानी की कमी की वजह से शौचालयों का रखरखाव, अच्छी स्वच्छता सुनिश्चित करना और रसोई चलाना मुश्किल हो जाता है.

> **“पानी की आपूर्ति एक हैंडपंप से होती है जो ज्यादातर वक्त खराब ही रहता है. शौचालय बेकार हैं और कोई चारदीवारी या खेल का मैदान नहीं है.” (मजडीहा, दुमका जिला)**

**शौचालय:** यूडीआइएसई के आंकड़ों के मुताबिक, झारखंड के 98 फीसद प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूलों में इस्तेमाल के लायक शौचालय हैं, और 97 फीसद में लड़कियों के लिए एक अलग शौचालय है. ये सरकारी आंकड़े बेहद भ्रामक हैं. हमारे सैंपल में 15 फीसद प्राइमरी स्कूलों और 5 फीसद अपर-प्राइमरी स्कूलों में इस्तेमाल के लायक कोई शौचालय नहीं था. सर्वेक्षण टीमों ने दोनों श्रेणियों में करीब 40 फीसद शौचालयों को ही “अच्छी” स्थिति में पाया. कुछ स्कूलों में शौचालयों की स्थिति अच्छी है लेकिन वे ज्यादातर बंद ही रहते हैं और खासकर शिक्षकों के लिए आरक्षित हैं.

> **“शौचालयों के अंदर झाड़ियां उगी हुई थीं और ऐसा लग रहा था कि जब से उन्हें बनाया गया है तब से उनका इस्तेमाल नहीं किया गया है.” (सरुका, देवगढ़ जिला)**

**बिजली:** ज्यादातर स्कूलों में बिजली कनेक्शन था. सर्वे टीम ने 46 फीसद प्राइमरी स्कूलों और लगभग 70 फीसद अपर-प्राइमरी स्कूलों में फिटिंग को “अच्छा” माना, यानी इस मामले में काफी तरक्की हुई है. लेकिन कई स्कूल चोरी, तोड़फोड़ या रखरखाव की कमी की वजह से पंखे और रोशनी के बिना काम चला रहे हैं.

**रखरखाव:** कई स्कूलों में रखरखाव की गंभीर समस्या है, जो जर्जर परिसरों, टूटे फिक्सचर और बेकार उपकरणों के रूप में दिखती है. स्कूल प्रबंधन समितियों (एसएमसी) के पास रखरखाव के लिए कुछ पैसे होते हैं, लेकिन यह अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है कि अक्सर उनका दुरुपयोग किया जाता है. अगर पैसे को अच्छी तरह इस्तेमाल भी किया जाए तब भी रखरखाव कोष (एक सामान्य प्राइमरी स्कूल के लिए हर साल 10,000 रुपए) यह सुनिश्चित करने के लिए अपर्याप्त है कि स्कूल परिसर अच्छी स्थिति में हो.

**“स्कूल की इमारत जर्जर हालत में है, और छात्रों को दूसरे स्कूल में स्थानांतरित करना पड़ा. हमें एक स्कूल भवन, शौचालय, किचन शेड और लाइब्रेरी की जरूरत है.” (नगीना सिंह रोड, गिरिडीह जिला)**

# ईमानदारी का अभाव

झारखंड की स्कूली शिक्षा प्रणाली में सबसे बड़ी कमी शिक्षकों, कक्षाओं या अन्य सुविधाओं की कमी नहीं बल्कि ईमानदारी की कमी है. हम "गंभीरता की कमी" टर्म का इस्तेमाल संबंधित समस्याओं के एक समूह को दिखाने करने के लिए करते हैं, जैसे कि गैर-जिम्मेदार प्रशासन, नीरस शिक्षण पद्धति और एक आलसी कार्य संस्कृति. इस सर्वेक्षण से उभरी ईमानदारी की कमी के कुछ लक्षण इस प्रकार हैं:

- बेकार स्कूल (जहां कोई शैक्षिक गतिविधियां नहीं हो रही हैं) को वर्षों तक जारी रखने की अनुमति दी जाती है—मिसाल के तौर पर देखें: बॉक्स 2.
- सर्वेक्षण के वक्त (स्कूल वर्ष शुरू होने के कुछ महीनों बाद) कई स्कूलों में यूनिफॉर्म या पाठ्यपुस्तकें नहीं बांटी गई थीं, या कुछ विद्यार्थियों को दी गई थीं लेकिन दूसरों को नहीं.
- स्कूल प्रबंधन समिति (एसएमसी) और अभिभावक-शिक्षक बैठकें सांकेतिक तौर पर आयोजित की जाती हैं लेकिन इन निकायों के पास बहुत कम अधिकार या प्रभाव है.
- जिला या ब्लॉक पदाधिकारियों का स्कूल का दौरा भी प्रतीकात्मक होता है और मुख्य रूप से खानापूर्ति के लिए किया जाता है.
- शिक्षकों की शिकायतों (जैसे सुविधाओं की कमी या कर्मचारियों की कमी के बारे में) को दूर नहीं किया जाता.
- पारा-शिक्षकों और मिडडे मील रसोइयों की तनख्वाह हमेशा महीनों बाद मिलती है. सर्वेक्षण के वक्त कुछ रसोइयों की तनख्वाह छह महीने से नहीं मिली थी.
- गतिविधि-आधारित प्रणाली शिक्षा मौजूद नहीं है. इसकी जगह, बच्चों से नकल, रटकर सीखने, एकल अभ्यास करने, बिना सहायता के सहपाठियों से सीखने और अन्य गैर-रचनात्मक तरीकों से काम चलाने की उम्मीद की जाती है.

# बॉक्स 2
# एजामारः एक बेकार स्कूल

एजामार लातेहार जिले में मनिका ब्लॉक मुख्यालय के पास के इलाके में एक दलित गांव है, जिसमें कुछ आदिवासी परिवार भी रहते हैं. स्थानीय स्कूल में 88 बच्चे नामांकित हैं और एक शिक्षक है. इस सर्वे के वक्त शिक्षक आइसीयू में थे और प्रतिनियुक्ति पर आए दूसरे शिक्षक ने अभी अभी उनकी जगह ली थी, जिन्हें कुछ अता-पता नहीं था.

इस स्कूल में दो कमरे हैं, दोनों कमरों की दीवारें-खिड़कियां टूटी हुईं और फर्श गंदे हैं. दोनों में अंधेरे का राज है. इसमें बिजली का कनेक्शन है, लेकिन सभी बल्ब और पंखे चोरी हो गए हैं. इसके बगल में पुराना स्कूल भवन था, जो पूरी तरह से जर्जर हो चुका था. उस खाली इमारत को तोड़ा नहीं गया. उसकी वजह से वह छोटी सी जगह भी घिर गई जो खेल का मैदान बन सकती थी. यहां पानी का कोई इंतजाम नहीं था. एक हैंडपंप था जो चलता भी है तो उसमें से भूरे रंग का दूषित पानी निकलता है. शौचालय भी जर्जर हालत में है, जिसके अंदर झाड़ियां उग आई हैं.

रसोइये ने बताया कि हर रोज मिडडे मील पकाने के बावजूद उन्हें छह महीने से भुगतान नहीं किया गया है. चूंकि रसोई की छत टूटी हुई है और पानी या गैस का कनेक्शन नहीं है, इसलिए वह बगल के घर में खाना बनाती हैं. शिक्षक जो भी पैसा देते हैं, उससे वह मिडडे मील का इंतजाम करती हैं. उन्होंने साफ बताया कि इस स्कूल में बच्चों को अंडे नहीं दिए जाते, और यहां तक कि सब्जियां भी नियमित रूप से नहीं दी जा रही हैं. बच्चों ने यह भी कहा कि उन्होंने इस स्कूल में कभी अंडे नहीं खाए.

एजामार के बच्चों को कोविड-19 संकट के दौरान उनके हाल पर छोड़ दिया गया था. उनमें से ज्यादातर ने कहा कि इस साल की शुरुआत में जब वे स्कूल वापस आए तो वे पढ़ना-लिखना भूल गए थे. उनकी शिकायत थी कि स्कूल में पढ़ाई नहीं हो रही है. शिक्षक ब्लैकबोर्ड पर कुछ लिख देते हैं और उन्हें उसकी कॉपी करने को कह दिया जाता है. उन्हें उनमें से ज्यादातर बातें समझ नहीं आतीं. बच्चों के पास न तो यूनिफॉर्म थी और न ही उनके बैंक खातों में यूनिफॉर्म के पैसे भेजे गए थे. उनके पास पाठ्यपुस्तकें भी नहीं थीं. कुछ एफएलएन सामग्री स्कूल में पहुंच गई थी, लेकिन वह अब भी एक डिब्बे में पड़ी हुई थी.

यह सब प्रखंड मुख्यालय और प्रखंड संसाधन केंद्र (बीआरसी) से पैदल दूरी पर हो रहा है. यह अफसोसनाक है क्योंकि इसके बावजूद बच्चों के चेहरे पर मुस्कान और उनमें उत्साह था.

(परन अमितावा )

एजामार, मनिका ब्लॉक

आखिर, इस व्यवस्था में इतनी उदासीनता और गैरजिम्मेदारी क्यों है? इसका एक ईमानदारी भरा जवाब यह है कि इसके मुख्य शिकार वे बच्चे हैं जो समाज के शक्तिहीन वर्गों से ताल्लुक रखते हैं. महंगे निजी स्कूलों में पढ़ने वाले विशेषाधिकार प्राप्त बच्चों के लिए यह व्यवस्था इतनी बुरी तरह से काम नहीं करती है. शिक्षा नीति मुख्य रूप से इन विशेषाधिकार प्राप्त बच्चों के लिए बनाई गई है. इसकी मिसाल के तौर पर, पाठ्यक्रम की प्रकृति, पाठ्यपुस्तकों की सामग्री, कोविड-19 संकट के दौरान ऑनलाइन सीखने के साथ जुड़ाव और स्कूल दोबारा खुलने पर वंचित बच्चों के लिए सहायक उपायों की कमी से देखा जा सकता है. चूंकि मौजूदा हालात में विशेषाधिकार प्राप्त बच्चे इतना बुरा प्रदर्शन नहीं कर रहे हैं, लिहाजा बदलाव के लिए खास दबाव नहीं है.

ऐसा नहीं है कि सरकार अच्छे स्कूल चलाने में सक्षम नहीं है. केंद्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, कस्तूरबा गांधी विद्यालय, और यहां तक कि झारखंड में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए आवासीय विद्यालय (नेतरहाट आवासीय विद्यालय नहीं) जैसे विशेष विद्यालयों के मानक सामान्य सरकारी स्कूलों के मुकाबले बहुत ऊंचे होते हैं. यह बात समझ के बाहर है कि बाकी स्कूलों में इन मानकों को प्राप्त क्यूँ नहीं किया जा रहा है.

# कोविड -19 संकट का नतीजा

## पुनः मूषकः भव

झारखंड में प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूल दो साल के अंतराल के बाद आखिरकार 2022 की शुरुआत में (ज्यादातर फरवरी में) फिर से खुल गए. इससे कुछ महीने पहले स्कूली बच्चों के ऑनलाइन और ऑफलाइन लर्निंग (SCHOOL) सर्वेक्षण में सबूत मिले थे कि झारखंड में बड़ी संख्या में बच्चे, विशेष रूप से वंचित परिवारों के बच्चों ने कोविड-19 संकट के दौरान पढ़ने और लिखने की क्षमता खो दी थी (बाखला और अन्य, 2021). जीवीएसजे सर्वेक्षण से भी ऐसा ही नतीजे सामने आया: प्राइमरी और अपर-प्राइमरी, दोनों स्कूलों में ज्यादातर उत्तरदाता शिक्षकों ने कहा की स्कूल खुलने के बाद जब बच्चे वापस आए तो क्लास 3-5 में नामांकित "ज्यादातर" बच्चे पढ़ना और लिखना भूल गए थे (देखें: तालिका 8).

यह छोटे बच्चों के मामले में भी सच होगा क्योंकि उन्होंने कोविड-19 संकट से पहले और भी कम सीखा था. इस तरह, 2022 की शुरुआत में ज्यादातर स्कूलों में सारी प्राथमिक क्लासों (क्लास 1-5) में ज्यादातर ऐसे बच्चे शामिल थे जो पढ़ने और लिखने में असमर्थ थे. यह एक विनाशकारी स्थिति है क्यूंकी हम जानते हैं कि साक्षरता न केवल अपने आप में एक महत्वपूर्ण क्षमता है बल्कि आगे सीखने का एक शक्तिशाली स्प्रिंगबोर्ड भी है. हम इस समस्या को वंचित बच्चों के पूर्ण विकास पर कोविड-19 संकट से हुई बहुत बड़ी क्षति का एक लक्षण भी मान सकते हैं.

इस संकट ने 2022-23 में स्कूली शिक्षा में एक बड़े निवेश का आह्वान किया. झारखंड में 2022-23 का बजट तैयार होने से पहले ही तमिल नाडु जैसे राज्यों ने इस स्थिति में वंचित बच्चों की मदद करने का उदाहरण पहले ही दे दिय था. मिसाल के तौर पर, स्कूल के बाद विशेष ट्यूशन आयोजित किए गए थे.[11] झारखंड सरकार को इसी तरह के उपायों को लागू करने की राये दी गई थी। लेकिन जब स्कूल फिर से खुले तो दुर्भाग्य से राज्य सरकार "सामान्य कामकाज" में जुट गई.

(11) तमिल नाडु की पहल को इल्लम थेडी कलवी (आइटीके) के नाम से जाना जाता है. अधिक जानकारी के लिए, सिंह और अन्य, (2022) देखें.

## तालिका 8: कोविड के बाद बच्चों की पढ़ने और लिखने की क्षमताओं के बारे में शिक्षकों की धारणा

| "जब 2022 की शुरुआत में स्कूल फिर से खुला, तो क्या आपने पाया कि क्लास 3-5 के कुछ बच्चे पढ़ना और लिखना भूल गए थे?" | | | |
|---|---|---|---|
| | प्राइमरी स्कूल (%) | अपर प्राइमरी स्कूल (%) | सभी सैंपल स्कूल (%) |
| हां, उनमें से ज्यादातर | 55 | 52 | 53 |
| हां, कई | 20 | 20 | 20 |
| हां, कुछ | 18 | 24 | 21 |
| हां, बहुत कम | 7 | 3 | 5 |
| नहीं | 0 | 1 | 1 |

नोट: यह "उत्तरदाता शिक्षकों" *(हर स्कूल में वरिष्ठतम शिक्षक)* का आकलन है.
कुल कॉलम=*100*

# सीमित उपाय

जब हमने उत्तरदाता शिक्षकों से पूछा कि क्या कोविड-19 संकट से पीड़ित बच्चों की मदद के लिए स्कूल में कोई विशेष उपाय किए गए थे तो उनमें से ज्यादातर ने हां में जवाब दिया. लेकिन फिर पूछताछ करने पर पता चला कि ज्यादातर मामलों में ऐसे उपाय बहुत कम थे. संक्षेप में, वे निम्न प्रकार के थे (देखें: तालिका 9):[12]

- ज्यादातर उत्तरदाताओं ने कहा कि बच्चों को "विशेष शिक्षण सामग्री" दी गई थी. लेकिन यह सामग्री मुख्य रूप से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसरण में तैयार की गई केंद्र-प्रायोजित "फाउंडेशनल लर्निंग ऐंड न्यूमरेसी" (एफएलएन) की सामग्री निकली. कई शिक्षकों ने इस सामग्री को उपयोगी पाया, लेकिन ईमानदारी से कहा जाए तो इसका कोविड -19 संकट, या झारखंड सरकार के साथ कोई वास्ता नहीं था.
- उत्तरदाताओं के एक बड़े वर्ग (37 फीसद) ने दावा किया कि विशेष उपायों में "ब्रिज कोर्स" शामिल है. इसका मतलब कभी-कभी एनजीओ के साथ साझेदारी में या सीएसआर कार्यक्रमों के तहत आयोजित की जा रही अतिरिक्त कक्षाओं से था. कभी-कभी इसका मतलब केवल ज्ञान सेतु पाठ्य पुस्तकों के वितरण से था, जो कि कोविड-19 संकट से पहले तैयार की गई थी. उन्हें अक्सर मददगार माना जाता था, लेकिन यह वास्तव में "ब्रिज कोर्स" के लायक नहीं है.
- लगभग आधे उत्तरदाताओं ने कहा कि पाठ्यक्रम को सरल बना दिया गया था.

दूसरी ओर, निम्नलिखित प्रकार के उपाय स्पष्ट रूप से नहीं किए गए थे (उत्तरदाताओं के एक छोटे वर्ग की ओर से इसके विपरीत दावों के बावजूद): स्कूल के समय को बढ़ाना; अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था; छुट्टियों में कमी; अतिरिक्त शिक्षकों या वॉलंटियर्स को जुटाना; अध्यापन या पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण बदलाव (एफएलएन के अलावा).

संक्षेप में बताएं तो एकमात्र अच्छी खबर यह है कि एफएलएन सामग्री इस स्थिति में उपयोगी लगती है. बाकी ज्यादातर स्कूल ऐसे चल रहे हैं जैसे पिछले 2-3 साल में कभी बंद ही नहीं हुए हों.

---

(12) ज्यादातर उत्तरदाताओं ने यह भी कहा कि घर-घर नामांकन अभियान चलाया गया था, लेकिन यह एक नियमित (वार्षिक) अभ्यास है और इसे विशेष उपाय के रूप में नहीं गिना जाता है.

## तालिका 9: कोविड के बाद उपचारात्मक उपाय

| उत्तरदाता शिक्षकों का अनुपात (%) जिन्होंने कहा कि उनके स्कूल में उन बच्चों की मदद करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए गए थे जो पढ़ना और लिखना भूल गए थे: | | |
|---|---|---|
| | प्राइमरी स्कूल | अपर प्राइमरी स्कूल |
| विशेष शिक्षण सामग्री का वितरण | 70 | 74 |
| ब्रिज कोर्स | 36 | 40 |
| पाठ्यक्रम का सरलीकरण | 56 | 59 |
| स्कूल के समय का विस्तार | 25 | 19 |
| स्कूल के समय के बाहर अतिरिक्त कक्षाएं | 19 | 22 |
| छुट्टियों में कटौती | 32 | 29 |

# अथाह उपस्थिति

हमारे पास सर्वेक्षण के दिन प्रत्येक स्कूल में मौजूद बच्चों की संख्या के बारे में दो अलग-अलग स्रोतों से जानकारी है: स्कूल रजिस्टर, और सर्वेक्षण टीम का अपना अनुमान (आमतौर पर प्रत्यक्ष "हेडकाउंट" पर आधारित). टीम का अनुमान है कि ज्यादातर स्कूलों में स्कूल रजिस्टरों में उपस्थिति के आंकड़े काफी सटीक हैं: ज्यादा नहीं, बस थोड़ा ही.

उपस्थिति दर की गणना करने के लिए हम इन आंकड़ों का उपयोग कर सकते हैं: उपस्थित बच्चों की संख्या को नामांकित बच्चों की संख्या से विभाजित करके. एक अच्छी तरह से काम करने वाली स्कूल प्रणाली में उपस्थिति दर 100 फीसद के करीब और निश्चित रूप से 90 फीसद से ज्यादा होनी चाहिए. लेकिन इसके बजाय, स्कूल रजिस्टरों के आधार पर, हम प्राइमरी स्कूलों में केवल 78 फीसद और अपर प्राइमरी स्कूलों में 65 फीसद की औसत उपस्थिति दर पाते हैं. उपस्थित विद्यार्थियों की गणना के आंकड़े, जिसके ज्यादा सटीक होने की संभावना है और भी कम हैं: क्रमशः 68 फीसद और 58 फीसद (देखें: तालिका 10).

हर रोज वही छात्र अनुपस्थित हो सकते हैं या नहीं भी हो सकते हैं. अगर वही छात्र अनुपस्थित रहते हैं तो इसका मतलब यह होगा कि औपचारिक रूप से दाखिला लेने के बावजूद, बच्चों के एक बड़े हिस्से (विशेष रूप से अपर प्राइमरी स्तर पर) को स्कूली शिक्षा व्यवस्था से प्रभावी रूप से बाहर रखा गया है. कुछ समय तक स्कूल रजिस्टरों की बार-बार जांच से इस बारे में और अधिक जानकारी मिलेगी.

इनमें से किसी से भी पता नहीं चलता कि कम उपस्थिति कोविड-19 संकट का परिणाम है या झारखंड की पुरानी समस्या है. बहुत मुमकिन है कि यह कोविड -19 से पहले की समस्या है लेकिन आज यह और भी बदतर हो चली है. वैसे, यह तो जाहिर है कि कम उपस्थिति झारखंड में स्कूली शिक्षा संकट का एक अन्य पहलू है. इससे बड़ी संख्या में बच्चों के वास्तविक ड्रॉप-आउट (पढ़ाई छोड़ने) का खतरा है.

## तालिका 10: सर्वेक्षण के दिन सैंपल स्कूलों में उपस्थिति दर

| | | प्राइमरी स्कूल | अपर प्राइमरी स्कूल |
|---|---|---|---|
| नामांकित बच्चों की औसत संख्या (ए) | | 54 | 210 |
| उपस्थित बच्चों की औसत संख्या: | स्कूल रजिस्टर के अनुसार (बी) | 42 | 136 |
| | सर्वेक्षण टीम के अनुसार (सी) | 37 | 122 |
| हाजरी दर (%) | स्कूल रजिस्टर के अनुसार (बी/ए) | 78 | 65 |
| | सर्वेक्षण दल के अनुसार (सी/ए)) | 68 | 58 |
| 80% से ज्यादा उपस्थितिथि दर वाले स्कूल (% | | 28 | 12 |

सादा-मिडडे-मील

# सादा-मिडडे-मील

स्वादिष्ट और पौष्टिक मिड-डे- मील स्कूल में उपस्थिति के साथ ही बच्चों के पोषण में सुधार करने में बहुत मदद कर सकता है. हर दिन एक अंडा परोसने से दोनों मामलों में काफी मदद मिल सकती है. कोविड के बाद स्कूल के भोजन में सुधार करने और सप्ताह में पांच या छह दिन अंडे देना शुरू करने की सारी वजहें मौजूद थीं. संयोग से यह झारखंड सरकार का पुराना वादा है.

लेकिन सर्वे में पाया गया कि स्कूल पैसे की कमी की वजह से बुनियादी मिड-डे- मील मुहैया कराने के लिए जूझ रहे थे. उत्तरदाता शिक्षकों के एक बड़े वर्ग (दो-तिहाई) ने कहा कि सर्वेक्षण के समय स्कूल के पास मिडडे मील के लिए पर्याप्त पैसे नहीं थे. उनमें से ज्यादातर का मतलब यह था कि मिड-डे-मील का पैसा महीनों से नहीं मिला है.[13]इसकी वजह से वे स्थानीय दुकानों से उधार लेकर या अन्य स्रोतों से कर्ज लेकर मिड-डे-मील की व्यवस्था करने के लिए मजबूर थे. ऐसे में मिड-डे-मील क्वालिटी पर पड़ने वाले असर की कल्पना करना मुश्किल नहीं है.

> **“एमडीएम का पैसा खत्म हो गया है. मिड-डे-मील को चालू रखने के लिए प्रिंसिपल अपनी जेब से खर्च करती हैं. बच्चे शिकायत कर रहे हैं कि खाना अच्छा नहीं है.” (करवाकला, गढ़वा जिला)**

मिड-डे-मील में अंडा परोसने की वर्तमान नीति यह है कि हफ्ते में दो बार स्कूल के भोजन में एक अंडा शामिल किया जाए. ज्यादातर उत्तरदाता शिक्षकों (90 फीसद) ने कहा कि अंडे सप्ताह में दो बार दिए जा रहे हैं लेकिन माता-पिता या बच्चों के साथ अनौपचारिक बातचीत से पता चला कि यह बात सही नहीं है. ऐसा लगता है कि हफ्ते में दो बार से कम अंडे दिए जाना काफी सामान्य है और शिक्षकों के एक छोटे वर्ग (10 फीसद) ने यह बात स्वीकार की. ऐसा लगता है कि मिड-डे-मील का पैसा देर से मिलने के कारण कई स्कूल अंडे के पैसे का इस्तेमाल दाल और सब्जियां खरीदने के लिए करते हैं. तीन स्कूलों में तो बच्चों को अंडे दिए ही नहीं जाते हैं.

---

(13) कुछ शिक्षकों के मुताबिक, मुख्य मुद्दा यह है कि स्कूलों को प्रत्येक तिमाही की शुरुआत में एमडीएम फंड मिलता था, लेकिन अब यह उन्हें प्रत्येक तिमाही के आखिर में मिल रहा है. पैसा उपलब्ध हो तो भी प्रतिबंधात्मक लागत मानदंडों (प्राइमरी स्तर पर प्रति बच्चा प्रति दिन 5 रुपए, पिछले 10 साल में वास्तविक रूप से कमोबेश अपरिवर्तित) की वजह से स्कूली बच्चों को बहुत ही बुनियादी भोजन से अधिक कुछ देना मुश्किल है.

# शिक्षकों का नजरिया

इस सर्वेक्षण में शिक्षकों के साथ उनके अपने विचारों और चिंताओं के बारे में विस्तृत चर्चा शामिल थी. पहले कही गई बातों से उनकी कई शिकायतों का अंदाजा आसानी से लगाया जा सकता है. उनकी सबसे बड़ी शिकायत (अब तक) शिक्षकों की कमी है, जिससे उनके लिए अच्छा काम करना बहुत मुश्किल हो जाता है. उनके पास बुनियादी सुविधाओं और बुनियादी ढांचों—पानी, बिजली, खेल के मैदान, चार दीवारी की कमी के बारे में भी कई शिकायतें हैं और ये सारी शिकायतें जायज हैं.

शिक्षकों की एक और नियमित शिकायत "गैर-शिक्षण कार्यों" का बोझ है: रिकॉर्ड रखना, मिडडे मील रसद, चुनाव संबंधी कार्य, प्रशिक्षण सत्र, बच्चों के लिए बैंक खाते खोलवाना, वगैरह.[14] शिक्षकों की कमी और अत्यधिक गैर-शिक्षण कार्यों का शिक्षण गतिविधियों पर बहुत बुरा असर पड़ता है. शिक्षा का अधिकार कानून के अनुसार, क्लास में पढ़ाई के घंटों का इस्तेमाल गैर-शिक्षण कार्यों के लिए नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन हर जगह ऐसा होना आम बात है.

कई शिक्षक स्थानीय प्रशासन से निराश हैं. उनकी शिकायत है कि चाहे उनकी मांग कितनी भी जरूरी या बुनियादी क्यों न हो, कोई भी उन्हें पूरी नहीं करता. कुछ शिक्षकों ने माता-पिता से समर्थन या सहयोग की कमी की भी शिकायत की. उनका मानना है कि कुछ इलाकों के माता-पिता में शिक्षा के मूल्य या अपने बच्चों को हर दिन स्कूल भेजने की इच्छा की कमी है. वैसे, यह बताना मुशिकल है कि यह जायज शिकायत है या स्कूल के खराब प्रदर्शन को छिपाने का बहाना है.

---

(14) बहुत मुमकिन है कि इनमें से कुछ कार्य शिक्षा के अधिकार अधिनियम का उल्लंघन करते हों. अधिनियम की धारा 27 के अनुसार, शिक्षकों को जनगणना कार्य, आपदा राहत और चुनाव संबंधी कार्यों के अलावा "गैर-शैक्षिक उद्देश्यों के लिए तैनात" नहीं किया जाना है.

कई पारा-शिक्षक इस बात से नाराज हैं कि उनके साथ स्थायी शिक्षकों जैसा व्यवहार नहीं किया जाता है. वे स्थायी शिक्षकों के बराबर ही काम करते हैं, लेकिन उनका वेतन बहुत कम है (सर्वे के समय 17,000 रुपए प्रति माह, जबकि स्थायी शिक्षक 80,000 रुपए प्रति माह वेतन पा रहे थे). स्थायी शिक्षकों को हर महीने नियमित रूप से भुगतान किया जाता है, लेकिन पारा शिक्षकों के वेतन में अक्सर देरी होती है: उनमें से ज्यादातर को सर्वेक्षण के समय तीन महीने या उससे अधिक समय से भुगतान नहीं किया गया था. स्थायी शिक्षकों के पास बेहतर डिग्री और प्रशिक्षण होना इन भारी असमानताओं को जायज़ नहीं करता.

शिक्षकों के साथ बातचीत से उनमें अक्सर शिक्षा के साथ जुड़ाव की कमी का अंदाजा लगता है, जो स्कूल प्रबंधन और बाल-चिंतन के विपरीत है. कई शिक्षक मुश्किल घड़ी में बस किसी तरह काम चला रहे हैं या किसी दूसरे व्यक्ति की जिम्मेदारी संभाले हुए हैं. यहां तक कि जिनमें अच्छे शिक्षक बनने की प्रबल क्षमता है (और ऐसे लोग बहुत कम हैं) वे भी इस निराशाजनक माहौल में बहुत कम शैक्षिक कार्य करते हैं.

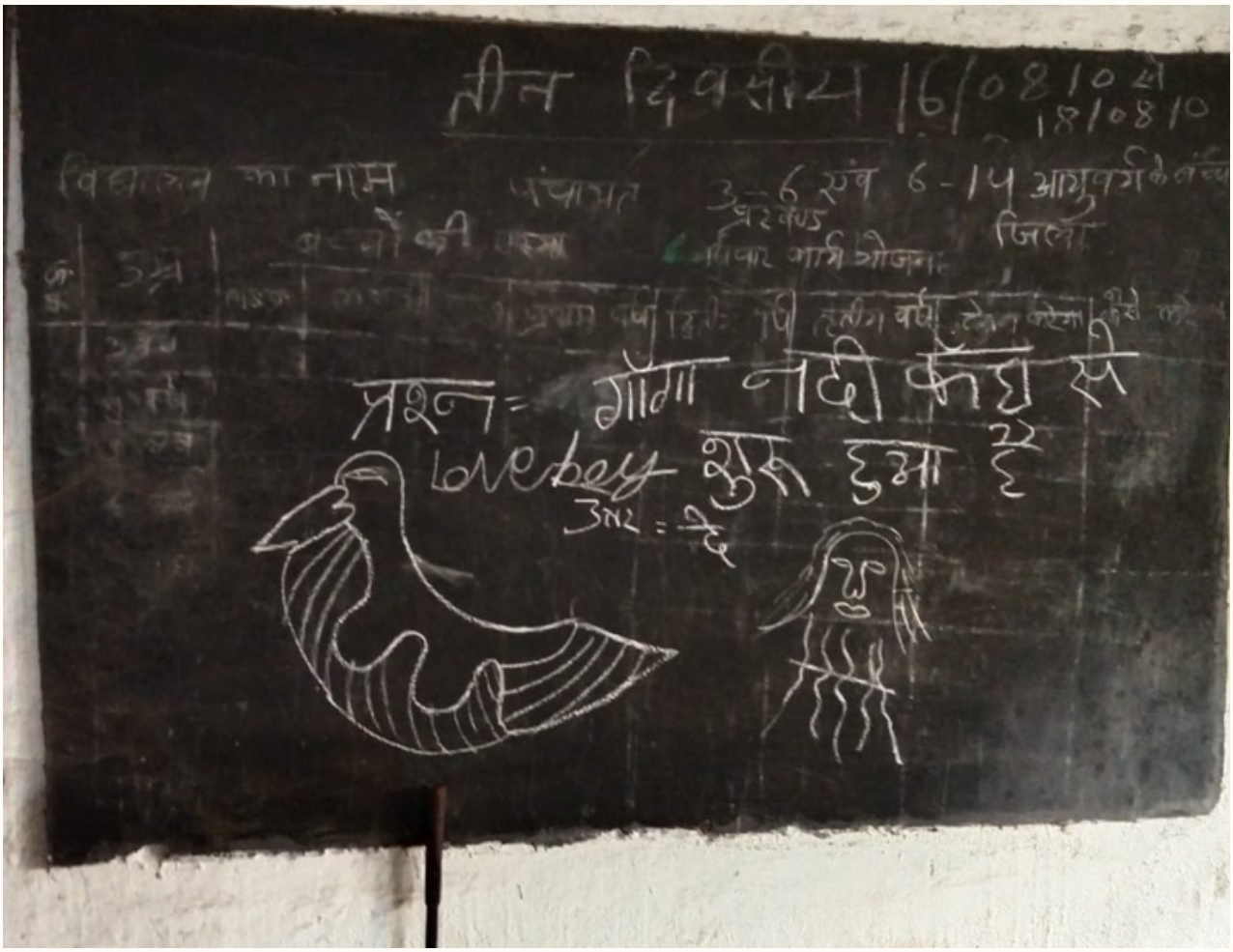

# उम्मीद की किरण

झारखंड में स्कूली शिक्षा व्यवस्था की दशा दयनीय है, लेकिन सामान्य सरकारी स्कूलों में भी कुछ स्कूल अच्छे हैं. इन अच्छे स्कूलों से जाहिर होता है कि झारखंड के कठिन माहौल में भी अच्छी शिक्षा देना मुमकिन है. वे सफलता के सबसे महत्वपूर्ण कारण को भी सामने लाते हैं: शिक्षक प्रेरणा. समर्पित शिक्षकों वाले स्कूल अपने सुव्यवस्थित परिसर, दोस्ताना माहौल, जीवंत कक्षाओं और आत्मविश्वास से भरे बच्चों के लिए मशहूर हैं. रंकीकलां का सरकारी मिडिल स्कूल इसकी मिसाल है —देखें: बॉक्स 3.

हमें खूंटी जिले के एक आदिवासी क्षेत्र मुरहू में शिक्षक प्रेरणा की भूमिका का एक आकर्षक उदाहरण देखने को मिला. दो स्कूलों (एक-दूसरे से केवल कुछ किलोमीटर की दूरी पर स्थित) के सामने एक जैसे हालात थे, लेकिन एक ने बहुत अच्छा प्रदर्शन किया जबकि दूसरा बमुश्किल चल रहा था. सारा अंतर शिक्षकों के रवैये ने पैदा किया था—देखें: बॉक्स 4. हम सरसरी तौर पर देखते हैं कि बदहाल स्कूल का प्रबंधन दो उच्च-जाति के शिक्षकों के हाथ में था, जिन्हें अपने आदिवासी विद्यार्थियों के भविष्य की खास फिक्र नहीं थी. बेहतर स्कूल के मुख्य शिक्षक एक स्थानीय मुंडा आदिवासी थे, जिनका बच्चों के साथ अच्छा तालमेल था.

सभी शिक्षक काबिल नहीं होते, लेकिन उनमें से बहुत से अपनी न्यूनतम जिम्मेदारियों को आधे-अधूरे मन से पूरा करने के बजाय जीवंत स्कूली शिक्षा व्यवस्था में सक्रिय रूप से भाग लेना पसंद करेंगे. यह शिक्षा विभाग की जिम्मेदारी है कि वह ऐसा माहौल तैयार करे जो इसे संभव बना सके.

इस संबंध में एक अच्छी बात यह हुई है कि शिक्षकों के नदारद होने के मामले लगभग खत्म हो गए हैं, जो कुछ समय पहले व्यापक समस्या हुआ करती थी. सैंपल नमूना स्कूलों में सर्वे टीम के अघोषित दौरे के वक्त नियुक्त शिक्षकों में से 95 फीसद उपस्थित थे. बहुत मुमकिन है कि हाल ही में स्थापित बायोमीट्रिक अटेंडेंस सिस्टम के साथ इसका कुछ संबंध था. शिक्षक अपनी जगह पर मौजूद हैं, मुख्य मुद्दा यह सुनिश्चित करना है कि वे अपने समय का सदुपयोग करें.

अगला कदम कक्षा के घंटों के दौरान गैर-शिक्षण कार्यों को पूरा करने का रिवाज खत्म करना है. इसमें कोई शक नहीं कि शिक्षकों को अत्यधिक गैर-शिक्षण कार्य (कुछ बोझिल रिकॉर्ड रखने सहित) सौंपे जा रहे हैं. लेकिन पढ़ाने के लिए कक्षा के घंटे निर्धारित करने पर कोई समझौता नहीं किया जा सकता है. शिक्षा का अधिकार अधिनियम में स्पष्ट रूप से शिक्षकों के लिए हर हफ्ते कम से कम 45 घंटे काम करने का प्रावधान है. इसमें प्राइमरी स्कूलों में हर रोज कम से कम चार घंटे क्लास में पढ़ाई का मानदंड भी है—200 दिनों में 800 घंटे, कम से कम. लिहाजा, छह-दिवसीय सप्ताह में भी हर शिक्षक के पास गैर-शिक्षण गतिविधियों के लिए, कक्षा के समय के अतिरिक्त 20 घंटे से ज्यादा वक्त होता है. अगर गैर-शिक्षण कार्य इतने ज़्यादा है कि वे हर हफ्ते हर शिक्षक का 20 घंटे से ज्यादा वक्त लेते हैं, तो इस मामले को राज्य सरकार और शिक्षक संघों के बीच सुलझाया जाना चाहिए—इसमें बच्चों के भविष्य की बलि नहीं दी जानी चाहिए. हकीकत तो यह है कि कोविड के बाद स्कूली शिक्षा के संकट के इस दौर में क्लास में हर रोज चार घंटे से ज्यादा पढ़ाई होनी चाहिए, इससे कम तो बिल्कुल नहीं.

# बॉक्स 3
# रंकीकलां में मिडिल स्कूल

रंकीकलां (लातेहार जिला) के उच्च प्राथमिक विद्यालय में जाना सुखद रहा. वहां कुछ उत्साही और मेहनती शिक्षक थे, जिन्हें इस बात की अच्छी समझ थी कि वंचित छात्रों की मदद के लिए ज्ञान सेतु और एफएलएन सामग्री का उपयोग कैसे किया जाए. बच्चों ने भी कहा कि शिक्षकों ने लॉकडाउन के दौरान जूम क्लास से उनकी मदद करने की कोशिश की थी. वे एक फोन का उपयोग करके एक साथ जमा होते और एक साथ देखते थे. वैसे, केवल पुराने विद्यार्थी ही ऐसा कर पा रहे थे.

बाल संसद के दो सदस्य मुझे घुमाने ले गए—आदिवासी परिवारों के आत्मविश्वास से भरे दोनों बच्चों को अपना अच्छा स्कूल दिखाने में खुशी हो रही थी. स्कूल में कम से कम सौ किताबों वाली बढ़िया लाइब्रेरी थी, जो साफ-सुथरी अलमारियों पर बड़े करीने से रखी गई थीं.

कम से कम छह कक्षाएं थीं, उनमें से अधिकांश में सीखने की गतिविधियां चल रही थीं. एक कक्षा की छत टूटी हुई थी, जिसकी वजह से बारिश के मौसम में उसका इस्तेमाल नहीं हो सकता था. शिक्षकों ने बताया कि उन्होंने बार-बार बीआरसी से इसे ठीक कराने की गुहार लगाई लेकिन इंजीनियरों ने इसे बहुत महंगा काम समझा. उस कक्षा का इस्तेमाल चावल रखने के लिए किया जा रहा था.

रसोई में दो रसोइये थे, दोनों को महीनों से वेतन नहीं मिला था. न तो रसोइये और न ही छात्रों को पता था कि हफ्ते में दो बार अंडे देने होते हैं. मेरे दो गाइडों में से एक ने तुरंत कहा कि वह इसे स्कूल प्रबंधन समिति की अगली बैठक में उठाएगी, जहां वह बाल संसद का प्रतिनिधित्व करती है.

शिक्षकों और छात्रों का उत्साह प्रेरणादायक था और इससे मेरी उम्मीद बंधी. शिक्षकों ने कहा कि इस साल की शुरुआत में स्कूल फिर से खुलने के बाद से बच्चे बहुत उत्सुक और अध्ययनशील थे. उन्हें लगता है कि ऐसा इसलिए है क्योंकि बच्चे दो साल से स्कूल से बाहर हैं. लेकिन शायद शिक्षकों की ही लगन ने बच्चों में फिर से स्कूल लौटने की ललक पैदा कर दी थी.

(परन अमितावा)

रंकीकलां का पुस्तकालय

# बॉक्स 4
# दो स्कूलों की दास्तां

मुर्हू (खुंटी जिले) में दो प्राथमिक विद्यालयों के बीच तीव्र विरोधाभास दर्शाता है कि शिक्षकों की प्रेरणा से कैसे बड़ा बदलाव हो सकता है. दोनों स्कूल एक-दूसरे से बमुश्किल पांच किमी दूर हैं और दोनों आकार, मानदंडों, माहौल, बुनियादी ढांचे, शिक्षकों की नियुक्ति और छात्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि के मामले में बहुत समान हैं—फिर भी वे अलग-अलग तरीकों से काम करते हैं. दोनों के पास बाहर से काई जमी एक इमारत में दो शिक्षक थे. इन दोनों तक पहुंचने का रास्ता नहीं था और दोनों में दो गंदे क्लासरूम थे. लेकिन एक स्कूल में शिक्षकों ने सुधार का बीड़ा उठा लिया, जबकि दूसरा स्कूल बमुश्किल चल रहा था.

स्कूल ए एक छोटा स्कूल था जिसमें केवल 30 विद्यार्थी थे, सभी आदिवासी. शिक्षकों के पास स्थायी पद थे और दोनों उच्च जाति के थे. क्लासरूम में कोई डेस्क या रोशनी नहीं थी, लेकिन शिक्षकों के कार्यालय में एक नई मेज, एक गोदरेज अलमारी और एक पंखा था—ये सभी एसएमसी फंड से खरीदे गए थे. शिक्षकों ने बताया कि हाल में ही स्कूल की रंगाई-पुताई हुई थी, लेकिन दीवारों पर जगह-जगह लगे दाग-धब्बों को देखकर उनकी बात पर यकीन नहीं हो रहा था. जब हम पहुंचे तो स्कूल में बमुश्किल 12-15 विद्यार्थी थे. बताया गया कि बाकी विद्यार्थी एक स्थानीय उत्सव में व्यस्त हैं. शिक्षकों ने दावा किया कि अंडे दिए जा रहे हैं, लेकिन रसोई में कोई अंडे नहीं थे और रसोइये के चेहरे के भाव कुछ और ही इशारा कर रहे थे. विद्यार्थियों ने मुझे अंग्रेजी की दो कविताएं सुनाईं लेकिन शिक्षकों ने बच्चों को सीखने में मदद करने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई.

स्कूल बी के लगभग 50 विद्यार्थियों में ज्यादातर आदिवासी थे. यहां एक शिक्षक आदिवासी और दूसरा ओबीसी था. जब हम पहुंचे तो दोनों शिक्षक गंभीर लग रहे थे और वे पढ़ाने में व्यस्त थे. हमें उनका ध्यान बंटाने में थोड़ी हिचकिचाहट भी महसूस हुई, क्योंकि विद्यार्थी सबक याद करने में मगन थे. शिक्षकों से बातचीत शुरू करने के बावजूद वे चुपचाप (गणित और अंग्रेजी) पढ़ते रहे. वरिष्ठ शिक्षक एक स्थानीय मुंडा थे जो बच्चों से उनकी मातृभाषा में बात कर सकते थे, और दूसरे शिक्षक कुछ मुंडारी सीखने की पूरी कोशिश कर रहे थे. शिक्षकों ने बताया कि उन्होंने एक नई कक्षा के लिए अर्जी दी थी लेकिन अभी तक उसे मंजूरी नहीं मिली है. उन्होंने साफ तौर पर बताया कि इस स्कूल में हफ्ते में सिर्फ एक बार अंडा दिया जाता है. बाकी अंडे के पैसे का इस्तेमाल मिडडे मील के देर से मिलने वाले फंड की भरपाई के लिए किया जा रहा था. 'त्योहार' के बावजूद इस स्कूल में विद्यार्थियों की उपस्थिति अच्छी थी!

(परन अमितावा )

# कार्रवाई की घड़ी

बेहतर स्कूलों में उम्मीद के संकेतों के बावजूद जीवीएसजे सर्वेक्षण झारखंड में स्कूली शिक्षा व्यवस्था की निराशाजनक तस्वीर पेश करता है. नीचे जुड़ी हुई रिपोर्ट कार्ड इस तस्वीर के कुछ ठोस पहलुओं का सार पेश करते हैं. हम पाते हैं कि प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्कूल हर मामले में सबसे बुनियादी मानदंडों पर पीछे हैं. यह उन पहलुओं के लिए भी लागू होता है जिनको मापना मुश्किल है, जैसे क्लासरूम की गतिविधि, शिक्षण विधियों और सीखने के स्तर.

झारखंड में लाखों छोटे बच्चे परेशान-हाल शिक्षकों द्वारा चलाए जा रहे बदहाल स्कूलों में पढ़ने के लिए जद्दोजहद कर रहे हैं, जिनमें अक्सर कम पढ़े-लिखे और प्रशिक्षित एक ही शिक्षक मौजूद हैं. कोविड-19 संकट के दौरान अधिकांश बच्चे ऑनलाइन पढ़ाई जारी रखने में असमर्थ थे और व्यवस्था से बाहर कर दिए गए थे. इस साल की शुरुआत में जब स्कूल फिर से खुले तो उनमें से कई बच्चे पहले सीखी हुई सीख भूले गए थे और उनकी नियमित रूप से पढ़ने की आदत भी छूट गई थी. फिर भी उनकी मदद के लिए खास कुछ नहीं किया गया और व्यवस्था फिर से अपने "सामान्य कामकाज" में मसरूफ हो गई.

**झारखंड में स्कूली शिक्षा प्रणाली की निराशाजनक स्थिति बुनियादी शिक्षा के प्रति इस राज्य की दशकों की उदासीनता को दर्शाती है. यह उदासीनता भूल के साथ नाइंसाफी भी है. यह भूल इसलिए है क्योंकि सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा झारखंड की अर्थव्यवस्था और समाज को बदल सकती है. यह नाइंसाफी इसलिए है क्योंकि यह उत्पीड़ित वर्गों और समुदायों के हालात को बदलने नहीं देती.**

# रिपोर्ट कार्ड: प्राइमरी स्कूल

| प्राइमरी स्कूलों का अनुपात (%) | | | |
|---|---|---|---|
| एक से ज्यादा शिक्षक वाले | 65% | 30 से कम पीटीआर वाले | 53% |
| कम से कम एक महिला शिक्षक वाले | 29% | कम से एक स्थायी शिक्षक वाले | 60% |
| छात्रों की 80% ज्यादा हाजिरी वाले | 28% | दो क्लासरूम से ज्यादा वाले | 29% |
| शौचालयों की अच्छी स्थिति वाले | 41% | खेल के मैदान वाले | 36% |
| लाइब्रेरी की किताबों वाले | 63% | बिजली, पानी और शौचालय (सभी तीन) वाले | 0% |
| मिडडे मील के लिए पर्याप्त कोष वाले | 26% | कम से कम ऊपर की आधी खूबियों वाले | 58% |

हां नहीं

# रिपोर्ट कार्ड: अपर-प्राइमरी स्कूल

| अपर-प्राइमरी स्कूलों का अनुपात (%) | | | |
|---|---|---|---|
| तीन से ज्यादा शिक्षक वाले | 67% | 30 से कम पीटीआर वाले | 19% |
| कम से कम एक महिला शिक्षक वाले | 65% | कम से एक स्थायी शिक्षक वाले | 93% |
| छात्रों की 80% ज्यादा हाजिरी वाले | 12% | तीन क्लासरूम से ज्यादा वाले | 81% |
| शौचालयों की अच्छी स्थिति वाले | 43% | खेल के मैदान वाले | 55% |
| लाइब्रेरी की किताबों वाले | 77% | बिजली, पानी और शौचालय (सभी तीन) वाले | 0% |
| मिडडे मील के लिए पर्याप्त कोष वाले | 34% | कम से कम ऊपर की आधी खूबियों वाले | 63% |

हां NO

इस संकट का सबसे ज्यादा परेशान करने वाला पहलू यह है कि सार्वजनिक रूप से इसकी कोई चर्चा नहीं हो रही है. पीड़ितों के पास न तो कोई आवाज है और न ही कोई ताकत. विशेषाधिकार प्राप्त परिवार महंगे निजी स्कूलों की शरण में चले गए हैं, जहां स्कूली शिक्षा प्रणाली ठीक-ठाक काम कर रही है. नीति-निर्माताओं और राजनैतिक नेताओं की योजनाओं में वंचित बच्चों के हितों को खास अहमियत नहीं दी जाती. हमारे अपने सीमित अनुभवों से अंदाजा लगता है कि शिक्षा विभाग भी स्कूलों में बच्चों की हालत के बजाय तबादले, ठेके, खरीद और खानापूर्ति के बारे में ज्यादा फिक्रमंद रहता है. वहीं, राजनैतिक नेताओं ने झारखंड में बुनियादी शिक्षा में बहुत कम दिलचस्पी दिखाई है. लिहाजा, यह अराजकता बरसों से जारी है.

इस अराजकता को खत्म करना एक लंबी लड़ाई है और इसके लिए अभी से कोशिश शुरू होनी चाहिए. इस कोशिश में शिक्षा का अधिकार अधिनियम उपयोगी मार्गदर्शक बन सकता है. यह अधिनियम मुख्य रूप से कुछ विशिष्ट प्रावधानों के लिए जाना जाता है जैसे निजी स्कूलों में गरीब बच्चों के लिए 25 फीसद आरक्षण और "नो रिटेंशन" क्लॉज। इस क्लॉज का मतलब है कि आठवी क्लास से पहले आप किसी भी बच्चे को फेल नहीं कर सकते हैं. वैसे, इस अधिनियम का मकसद केवल यही नहीं था, बल्कि सभी बच्चों के लिए स्कूल में मुकम्मल माहौल तैयार करना था. इस अधिनियम में कई उपयोगी प्रावधान हैं, मिसाल के तौर पर न्यूनतम मानदंड, क्लास के घंटे, पाठ्यक्रम विकास, निजी शिक्षण, निर्देश भाषाएं, संवैधानिक मूल्य, शिक्षण विधियां, शारीरिक सुरक्षा, शिक्षक प्रशिक्षण, भागीदारी प्रबंधन, अभिभावक-शिक्षक सहयोग, सामाजिक समानता, पूर्व-स्कूली शिक्षा और बहुत कुछ. इसका कई तरीकों से उपयोग किया जा सकता है: सार्वजनिक नीति का मार्गदर्शन करने के लिए, सरकार को जवाबदेह ठहराने के लिए और लोगों को अधिकार के रूप में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की माँग करने में मदद करने के लिए.

अलबत्ता शिक्षा का अधिकार, शिक्षा के अधिकार अधिनियम तक सीमित नहीं है. लेकिन यह अधिनियम इसका अहम हिस्सा है. संयोग से, राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एससीपीसीआर) के पास इस अधिनियम के कार्यान्वयन की निगरानी की जिम्मेदारी है. लेकिन झारखंड में एससीपीसीआर अभी तक सक्रिय नहीं है. यह बुनियादी शिक्षा के प्रति राज्य सरकार की उदासीनता का एक और संकेत है.[15]

---

(15) शिक्षा का अधिकार कानून के मुताबिक, हर राज्य में एक प्राथमिक शिक्षा के लिए राज्य सलाहकार परिषद होना चाहिए। अगर ऐसी कोई परिषद झारखंड में मौजूद है तो ये एक सरक्षित रहस्य है।

इस अधिनियम के लिए कई स्तरों पर साहसिक कार्रवाई की जरूरत है, क्योंकि झारखंड के ज्यादातर स्कूल इस अधिनियम का उल्लंघन करते हैं. इस मामले में शुरुआत के लिए हम दो जरूरी उपायों पर जोर देते हैं. पहली बात, झारखंड को अधिक शिक्षकों की जरूरत है. सर्वेक्षण के आंकड़ों के आधार पर हमारा अंदाजा है कि इस अधिनियम के अनुपालन के लिए प्राइमरी और अपर-प्राइमरी स्तरों पर शिक्षकों की संख्या को मोटे तौर पर दोगुना करने की जरूरत है. दूसरी बात, एक मजबूत शिकायत निवारण संरचना स्थापित करने की जरूरत है: झारखंड में स्कूली शिक्षा व्यवस्था इतनी खराब होने की एक वजह यह है कि यहां लोगों की शिकायतों और विचारों की सुनवाई नहीं होती।

स्कूली शिक्षा प्रणाली को ठीक करने की पहली जिम्मेदारी राज्य सरकार की है. प्रशासन के साथ राजनैतिक नेतृत्व की कार्रवाइयों का व्यापक प्रभाव पड़ता है. हमने देखा है कि गैरजिम्मेदारी (या "ईमानदारी की कमी") ऊपर से शुरू होती है. लेकिन स्कूली शिक्षा व्यवस्था को बदलने में सामाजिक आंदोलनों और उससे भी बड़ी जनता की भागेदारी की भूमिका होती है. मिसाल के तौर पर, सामाजिक आंदोलन बुनियादी शिक्षा को एक ज्यादा अहम राजनैतिक मुद्दा बनाने में मदद कर सकते हैं. झारखंड में कई व्यक्तियों और संगठनों ने पहले भी इस क्षेत्र में शानदार काम किया है, लेकिन अभी बहुत कुछ करने की गुंजाइश है.

हम इस निष्कर्ष को डॉ. आम्बेडकर के प्रेरक नारे "शिक्षित बनो, संघर्ष करो, संगठित हो" को याद करते हुए खत्म कर रहे हैं. इस नारे के शब्दों को सोच-समझकर इस क्रम में रखा गया है. अलबत्ता, कभी-कभी शिक्षा खुद कुछ संघर्ष या आंदोलन की मांग करती है. यकीनन झारखंड में आज यही स्थिति है.

# संदर्भ

Bakhla, N., Drèze, J.P., Khera, R. (2021), "Locked Out: Emergency Report on School Education", *Frontline*, 8 October (also available at roadscholarz.net).

De, A., Khera, R., Samson, M., and Shiva Kumar, A.K. (2011), *PROBE Revisited: A Report on Elementary Education in India* (New Delhi: Oxford University Press).

Datta, S., and Kingdon, G.G. (2021), "The Myth and Reality of Teacher Shortage in India", RISE Working Paper 21/072.

Singh, A., Romero, M., and Muralidharan, K. (2022), "Covid-19 Learning Loss and Recovery: Panel Data Evidence form India", Working Paper 30552, National Bureau of Economic Research.

The PROBE Team (1999), *Public Report on Basic Education* (New Delhi: OUP).